अपनी इच्छा के अनुसार इन्द्रियों को वश में कर सकता है। परन्तु अधिकांश लोग तो दास की भाँति इन्द्रियों की आज्ञा का पालन करने में ही लगे हुए हैं। इस श्लोक में योगी के बैठने का प्रकार कहा गया है। इन्द्रियाँ वस्तुतः विषधर सर्पों के समान हैं। उन्हें स्वच्छन्द एवं स्वेच्छामय आचरण ही सदा प्रिय रहता है। यह आवश्यक है कि योगी अथवा भक्त इन्द्रिय रूपी सर्पों का निग्रह करने में सपेरे के समान बलवान् हो। वह उन्हें स्वेच्छाचार कभी नहीं करने देता। शास्त्रों में इसके लिए अनेक विधि-निषेध हैं। इन विधि-निषेधों के पालन द्वारा विषय भोग को मर्यादित किये बिना कृष्णभावनामृत में अचल निष्ठा नहीं हो सकती। इस सन्दर्भ में यहाँ कछुए का उत्तम उदाहरण दिया गया है। कूर्म में इतनी सामर्थ्य होती है कि अपने अंगों को एक क्षण में समेट सकता है और फिर किसी भी क्षण विशेष कार्य के लिए उन्हें पुनः बाहर कर सकता है। कृष्णभावनाभावित भक्त अपनी इन्द्रियों का उपयोग केवल भगवत्सेवा के कार्यों में ही करते हैं, अन्यथा उनका संवरण किए रहते हैं। इस प्रकार इन्द्रियों को आत्मवश रखने वाले कूर्म के दृष्टान्त से यह शिक्षा दी गई है कि इन्द्रियों को नित्य-निरन्तर भगवत्सेवामृत में ही निमज्जित रखे।

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते।।५९।।

विषयाः=इन्द्रियों के विषय; **विनिवर्तन्ते**=निवृत्त हो जाते हैं; **निराहारस्य**=संयम करने वाले; **देहिनः**=देहबद्ध जीव के; **रसवर्जम्**=रस नहीं जाता; **रसः**=भोग की इच्छा; **अपि**=भी; **अस्य**=उसकी; **परम्**=उत्तम रस का; **दृष्ट्वा**=अनुभव होने पर; **निवर्तते**=शान्त हो जाती है।

अनुवाद

इन्द्रियतृप्ति का संयम करने से बद्धजीव के विषय तो निवृत्त हो जाते हैं, परन्तु भोगों में आसक्ति बनी रहती है। उत्तम रस के अनुभव से उसकी भी निवृत्ति हो जाती है और बुद्धियोग की प्राप्ति होती है।।५९।।

तात्पर्य

कृष्णभावनारूप शुद्ध सत्त्व में स्थित हुए बिना विषयभोग का निवर्तन नहीं किया जा सकता। विधि-विधान द्वारा विषयभोग को मर्यादित करना रोगी के लिए कुछ खाने के पदार्थों का निषेध करने जैसा है। परन्तु न तो रोगी को यह निषेध रुचिकर लगता है और न ही भोजन के प्रति उसकी रुचि समाप्त होती है। इसी प्रकार अष्टांगयोग के यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान आदि साधनों से इन्द्रियों को वश में करना उन अल्पज्ञ मनुष्यों के लिए उपयुक्त है, जो इससे अधिक और कुछ नहीं जानते। जिसने कृष्णभावना में उत्तरोत्तर प्रगति करते हुए श्रीकृष्ण के अनुपम माधुर्यामृत का आस्वादन कर लिया है, उस भक्त की तो निष्प्राण एवं म्लान प्राकृत वस्तुओं में स्वभावतः लेशमात्र भी रुचि नहीं रहती। अतएव संयमादि का